बन्द और रैलियां

Bandh aur Ralliya

आजकल प्रायः बन्दों, रैलियों, भूख हड़तालों, लम्बी हड़तालों और यात्राओं का रिवाज हो गया है। ये सब तरीके सरकार/सत्ता के अन्यायों या उसके नीति सम्बन्धी निर्णयों के प्रति असंतोष प्रकट करने के भोंडे तरीके हैं। इनके कारण सबके काम-काज रुक जाते हैं; दफ्तरों, शिक्षा संस्थाओं, व्यापार आदि के सब काम ठप्प पड़ जाते हैं। लेकिन प्रश्न यह है कि जिन उद्देश्यों के लिए ये रैलियां आदि की जाती हैं, क्या वे उद्देश्य परे होते हैं? अधिकांश मामलों में इस प्रश्न का उत्तर यही होगा कि इनसे उद्देश्य परे नहीं होते। इसके विपरीत, इनसे आम जनता को और रैली आदि करने वालों को भी नुकसान ही होता है। ऐसी स्थिति में इन तरीकों (विरोध प्रकट करने के) पर कानून बनाकर रोक क्यों न लगा दी जाए? क्योंकि ये अक्सर निरर्थक होते हैं, इनसे बर्बादी होती है और किसी को कोई लाभ नहीं होता।

इस देश का हर समझदार, निष्पक्ष और उत्तरदायी नागरिक इस बात से सहमत होगा कि ये सारे तरीके और रैलियां चाहे पैदल हों, रथ यात्रायें हों या मोटर साइकिलों के जुलूस के रूप में हों – जो हाल में हुई हैं, उनसे आम जनता को बहुत नुकसान हुआ है और बड़ी असुविधा हुई है।

इन हडतालों, रैलियों या बन्दों में भाग लेने वाले अधिकांश लोग या तो बैठे रहते हैं या सोते रहते हैं या कुछ दिनों की भूख हड़ताल के बाद आधे-अधूरे आश्वासन मिलने पर और बहुत बार तो कोई आश्वासन पाए बिना ही उपवास खत्म कर देते हैं।

विडम्बना यह है कि कुछ थोड़े से मामलों को छोड़कर शेष सभी हड़तालें, रैलियां आदि केवल राजनैतिक चालें होती हैं। इन गतिविधियों का संचालन कोई बड़ी राजनैतिक पार्टी या यूनियन करती है, जो बलपूर्वक या समझा-बुझा कर या अन्य तरीकों से हड़ताल या बन्द आदि को सफल बनाने की कोशिश करती है। हालांकि दस बात की कोई कसौटी नहीं है जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि कोई हडताल, बन्द या रैली सफल रही या नहीं; पर जो इसके पक्ष में होते हैं, वे इसकी सफलता का दावा करते हैं। और जो इसके विरोधी होते हैं, वे इसे विफल बताते हैं।

जो लोग इन गतिविधियों में भाग लेते हैं, उनसे यदि पूछा जाए कि वे ऐसा क्यों करते हैं, तो वे भारत के उन महान नेताओं का उदाहरण देते हैं जिन्होंने इसी प्रकार के बन्द और रैलियों आदि के सहारे देश को आजादी की लड़ाई में सफलता दिलाई। लेकिन वे लोग यह भूल जाते हैं कि उन गतिविधियों के पीछे उनकी नीयत वह या वैसी नहीं है जो उन महान 'स्वार्थहीन' भारतीय नेताओं की थी। इसके अलावा, ध्यान देने की बात है कि आजकल जो बन्द और रैलियां होती हैं, वे शायद ही कभी शान्तिपूर्ण होती हैं। उनमें किसी-न-किसी कारण से हिंसा शुरू हो जाती है, पत्थरबाजी या आगजनी होने लगती है और सार्वजनिक सम्पत्ति को नुकसान पहुंचाया जाता है। सार्वजनिक सम्पत्ति का जो नुकसान होता है, वह बढ़े हुए करों के रूप में या अन्य किसी रूप में आम जनता से वसूल कर लिया जाता है।

इसके अतिरिक्त, रैलियों, तालाबन्दियों और बन्दों से उत्पादन में बाधा पड़ती है और देश में विकास की गतिशीलता को धक्का पहुंचता है। कभी-कभी तो इनसे करोड़ों रु. की हानि हो सकती है और अधिकांशतया कुछ थोड़े से लोगों या समाज के एक छोटे से वर्ग के हित के लिए यह सब नुकसान होता है।

लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि लोगों/मजदूरों को विरोध करने का कोई अधिकार नहीं है या अपनी शिकायतों को दूर करवाने की मांग करने का कोई अधिकार नहीं है। लेकिन इसका तरीका शिष्ट और तर्कपूर्ण होना चाहिए। जापान में श्रमिक विरोध करते हैं – लेकिन अलग ढंग से। वे अपना काम बन्द नहीं करतेः वे अपनी बांहों पर काले कपड़े की पट्टियां बांध लेते हैं और दुगुने उत्साह व जोश के साथ काम करते रहते हैं। वे नारेबाजी भी नहीं करते । जब उनके नियोक्ता/अफसर उनकी बांहों पर बंधी काली पट्टी देखते हैं, तो उन पर तत्काल इसका असर पड़ता है। जल्द-से-जल्द उच्चस्तरीय बैठक करके श्रमिकों की शिकायतों पर विचार करके उन्हें दूर किया जाता है।

इस बात में कोई दम नहीं है कि जब तक हिंसा नहीं होती तब तक नियोक्ता/ अधिकारी विरोध कर रहे कर्मचारियों/श्रमिकों की मांगों की ओर ध्यान नहीं देते। विनम्र निवेदन ज्यादा कारगर होता है। ध्यान रहे कि ताकत का मुकाबला बड़ी ताकत के बल पर किया जा सकता है और प्यार का मुकाबला अधिक प्यार के बल पर। स्पष्ट है कि प्यार वाला रास्ता बेहतर है। टकराव की अपेक्षा सहयोग बेहतर होता